राजस्थान के लुप्तप्राय सुषिर वाद्यों का सांस्कृतिक एवम संगीतशास्त्रीय अध्ययन

शोधसार –

राजस्थान की लोक संगीत परम्परा अपनी विविधता, सांस्कृतिक समृद्धि तथा विशिष्ट वाद्य परम्पराओं के लिए प्रसिद्ध रही है । सुषिर वाद्य राजस्थान की लोक–सांगीतिक परम्परा का महत्वपूर्ण अंग है जो केवल मनोरंजन का माध्यम ही नही बल्कि सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन के अभिन्न घटक भी रहे हैं । वर्तमान समय में आधुनिकता, बदलती सामाजिक संरचना तथा पारंपरिक कलाओं के प्रति घटती रूचि के कारण अनेक सुषिर वाद्य लुप्तप्राय स्थिति में पहुॅच गए है ।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य राजस्थान के लुप्तप्राय सुषिर वाद्यों का सांस्कृतिक एवं संगीतशास्त्रीय अध्ययन करना है । इस अध्ययन के अंतर्गत इन वाद्यों की उत्पत्ति, संरचना, वादन शैली, सांगीतीक विशेषताओं तथा लोक सांस्कृतिक संदर्भों का विश्लेषण किया गया है ।

मुख्य बिन्दु – लोक, सुषिर, संगीत, प्राचीन

प्रस्तावना –

1. भारत की सांस्कृतिक परम्परा में संगीत का विशेष स्थान रहा है, जिसमें लोक संगीत समाज की सांस्कृतिक पहचान, जीवन शैली तथा परम्पराओं का दर्पण माना जाता है । राजस्थान अपनी समृद्ध लोक सांस्कृतिक विरासत, विविध लोक कलाओं तथा विशिष्ट संगीत परम्पराओं के कारण विश्वभर में प्रसिद्ध है । यहॉ के लोक संगीत में प्रयुक्त विभिन्न वाद्य यंत्र न केवल मनोरंजन के साधन रहे है बल्कि सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक अवसरों के महत्वपूर्ण अंग भी रहे है ।

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

2. सुषिर वाद्य, जिनमें वायु के माध्यम से ध्वनि उत्पन्न होती है, राजस्थान को लोक संगीत परम्परा में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । अलगोजा, सतारा, शहनाई, पूंगी तथा अन्य पारंपरिक सुषिर वाद्य लोक जीवन के विभिन्न अवसरों में उपयोग किए जाते है । किंतु आधुनिकता, तकनीकी विकास, बदलती सांस्कृतिक प्रवृत्तियों तथा पारम्परिक कलाकारों की घटती संख्या के कारण अनेक सुषिर वाद्य आज लुप्तप्राय स्थिति में पहुॅच गए हैं ।

3. वर्तमान समय में इन लुप्तप्राय सुषिर वाद्यों का अध्ययन केवल संगीत तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण से भी जुडा हुआ विषय है । इन वाद्यों की संरचना, वादन शैली, सांगीतिक विशेषताएॅ तथा लोक जीवन में उनकी भूमिका का अध्ययन आवश्यक हो गया है, जिससे इनके संरक्षण एवं संवर्धन के लिए प्रभावी उपाय खोजे जा सके ।

4. प्रस्तुत शोध का उद्देश्य राजस्थान के लुप्तप्राय सुषिर वाद्यों का सांस्कृतिक एवं संगीतशास्त्रीय अध्ययन करना है ताकि इनके ऐतिहासिक सांगीतिक तथा सांस्कृतिक महत्व को समझा जा सके और भविष्य के लिए इस अमूल्य विरासत के संरक्षण में योगदान दिया जा सके । राजस्थान के ये लोक सुषिर वाद्य केवल संगीत तक सीमित नही है, बल्कि लोक संस्कृति, धार्मिक परम्पराओं उत्सवों तथा सामाजिक अवसरों से भी जुडे हुए है । राजस्थान के प्रमुख लोक सुषिर वाद्यों की जानकारी इस प्रकार है :–

1. **<u>अलगोजा</u>** :–

अलगोजा राजस्थान का एक प्रसिद्ध लोक सुषिर वाद्य है । यह दो बांसुरीनुमा नलियों से मिलकर बना होता है, जिन्हें एक साथ बजाया जाता है । यह सामान्यतः बॉस या लकड़ी का बना होता है । जिसमें दो नलियॉ

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

लगी रहती है । पहली नली धुन बजाने के लिए तथा दूसरी नली स्थिर स्वर प्रदान करने के लिए होती है । इसका वादन दोनों नलियों में एक साथ फूँक मारकर किया जाता है । इसे बजाने के लिए लगातार वायु प्रवाह और विशेष श्वास तकनीक की आवश्यकता होती है । विशेष रूप से लोकगीतों, मेलों, उत्सवों तथा पश्चिमी राजस्थान और रेगिस्तानी क्षेत्रों में इसका प्रयोग अधिक देखा जाता है ।

आधुनिक संगीत के प्रभाव के कारण यह वाद्य धीरे–धीरे लुप्तप्राय श्रेणी में माना जाने लगा है, हालांकि कई लोक कलाकार अभी भी इस परम्परा को आगे बढा रहे हैं । हाल के वर्षों में अलगोजा वादन को राष्ट्रीय स्तर पर भी पहचान मिली है ।

2. **सतारा** :–

सतारा राजस्थान का एक महत्वपूर्ण लोक सुषिर वाद्य है । जो विशेष रूप से पश्चिमी राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्रों तथा लोक संगीत परम्पराओं से जुड़ा हुआ है । यह वाद्य भी अलगोजा की भॉति दोहरी बॉसुरी वाला वाद्य माना जाता है, जिसमें दो नलियों को एक साथ बजाया जाता है । अलगोजा की भॉति इसमें छिद्रों की संख्या ज्यादा होती है इसकी आवाज गूंजदार, गहन तथा लयात्मक ध्वनि उत्पन्न करती है । इसकी दोहरी ध्वनि संरचना इसे अन्य बांसुरी से अलग बनाती है । यह वाद्य मुख्य रूप से लोक गीतों और लोक नृत्यों में ग्रामीण उत्सवों और मेलों में रेगिस्तानी संस्कृति और

UNDER REVIEW IN IJAR

चरवाहा जीवन से तथा लंगा और मॉगणियार परम्पराओं में विशेष स्थान रखता है ।

नए कलाकारों की कम रूचि, आधुनिक संगीत का प्रभाव, पारंपरिक कलाकारों की घटती संख्या, पर्याप्त आर्थिक सहायता का अभाव तथा लोक वाद्यों के सीमित दस्तावेजीकरण के कारण यह वाद्य भी लुप्तप्राय वाद्य की श्रेणी में माना जाने लगा है ।

3. **पूंगी** :–

पूंगी जिसे सामान्यतः बीन भी कहा जाता है, राजस्थान का एक प्राचीन लोक सुषिर वाद्य है । यह विशेष रूप से सपेरा समुदाय, जोगी समुदाय तथा लोक कलाकारों से जुड़ा हुआ वाद्य माना जाता है । राजस्थान के लोक संगीत में इसका महत्वपूर्ण स्थान रहा है । यह वाद्य फूॅक मारकर बजाया जाने वाला वाद्य है, जो मुख्य रूप से राजस्थान के रेगिस्तान क्षेत्रों और लोक परम्पराओं में प्रयोग किया जाता रहा है । इसे सपेरों की पहचान के रूप में देख जाता है और इसे बीन नाम से भी जाना जाता है ।

इसका मुख्य भाग सामान्यतः सूखी लौकी से बनाया जाता है । इसके साथ दो बॉस या लकड़ी की नलियॉ जोड़ी जाती है । इनमें से एक नली धुन बजाती है और दूसरी लगातार पृष्ठभूमि स्वर उत्पन्न करती है । इसमें रीड प्रणाली का प्रयोग होता है, जिससे ध्वनि उत्पन्न होती है । इसकी ध्वनि तीखी गूंजदार तथा निरंतर होती है । राजस्थान में यह सपेरा और

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

कालबेलियां परम्परा से गहराई से जुडा हुआ है । लोक उत्सवों, मेलों और पारंपरिक प्रस्तुतियों में इसका उपयोग होता रहा है ।

आधुनिक संगीत व इलेक्ट्रॉनिक वाद्यों का बढ़ता प्रभाव, पारंपरिक कलाकारों की घटती संख्या नई पीढी की कम रूचि तथा लोक समुदायों की बदलती जीवन शैली के कारण ये वाद्य भी लुप्तप्राय वाद्यों की श्रेणी में माना जाने लगा है ।

4. **<u>नड़ या नरह</u>** :–

राजस्थान का यह लोक सुषिर वाद्य मरूस्थलीय क्षेत्रों का अत्यंत दुर्लभ वाद्य है । इसे एक लंबी खोखली नली से बनाया जाता है । वादक इसमें फूॅक मारते समय गले से भी स्वर उत्पन्न करता है, जिससे अनौखी प्रतिध्वनि बनती है । यह पारंपरिक रूप से सरकंडे, बॉस या विशेष प्रकार की खोखली लकड़ी से बनाया जाता है। इसकी लम्बाई सामान्यतः 3 से 6 फीट की हो सकती है । इसमें सामान्य बॉसुरी की तरह कई छिद्र नही होते, इसकी ध्वनि विशेष फूॅक तकनीक से उत्पन्न होती है । यह वाद्य बजाने के लिए कई कलाकार ''सर्कुलर ब्रीदिंग'' (बिना रूके लगातार हवा देने की तकनीक) का भी प्रयोग करते हैं । इस वाद्य का उपयोग मुख्यतः लोककथाओं के गायन में, धार्मिक व सूफी कार्यक्रमों में तथा वीर रस और लोककथाओं के प्रस्तुतीकरण में किया जाता है ।

चूंकि यह वाद्य बजाना अत्यंत कठिन है । इसे बनाने वाले कारीगरों की संख्या बहुत कम रह गई है । साथ ही नई पीढ़ी का आधुनिक वाद्यों की

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

ओर बढ़ते आकर्षण के कारण, पारंपरिक लोक कलाकारों की घट रही संख्या के कारण भी यह वाद्य अब लुप्तप्राय वाद्यों की श्रेणी में माना जाने लगा है ।

5. **मशक** :–

'मशक' शब्द फारसी मूल का है, जिसका अर्थ है चमड़े की थैली या पानी रखने का एक पात्र जो चमड़े का बना होता है । मशक राजस्थान का एक पारंपरिक सुषिर वाद्य है । यह संरचना और कार्यप्रणाली में यूरोप के एक वाद्य बैगपाइप जैसा होता है । इस वाद्य के मुख्य तीन भाग होते है :–

1. **चमड़े की थैली** :– यह प्रायः बकरी या भेड़ की खाल से बनी होती है । जिसे पूरी तरह वायुरूद्ध बनाया जाता है । जिसमें वादक हवा भरकर दबाव बनाए रखता है ।
2. **फूंकने वाली नली** :– इस नली के माध्यम से वादक थैली में हवा भरता है । इसमें एक वॉल्व लगा रहता है ताकि हवा वापस बाहर न निकले ।
3. **स्वर नली** :– इसी भाग पर छिद्र बने होते हैं । इन छिद्रों को उंगलियों द्वारा खोलने–बंद करने पर विभिन्न स्वर उत्पन्न होते है ।

इसकी ध्वनि तीव्र और गूँजदार, दूर तक सुनाई देने वाली तथा उत्सव, जुलूस और खुले मैदानों के लिए उपयुक्त होती है । राजस्थान में इसे विशेष रूप से लोक धार्मिक अनुष्ठानों, लोकनृत्यों और ग्रामीण उत्सवों में

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

बजाया जाता था परन्तु इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, डीजे और रिकॉर्डेड संगीत के प्रसार, वादकों की घटती संख्या, निर्माण कला का संकट, आर्थिक लाभ का अभाव, संस्थागत संरक्षण की कमी, आदि कारणों के कारण यह वाद्य लुप्तप्राय होने के कगार पर है ।

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

6. **मुरला** :–

मुरला राजस्थान का एक पारंपरिक सुषिर वाद्य है । यह मुख्यतः पश्चिमी राजस्थान के लंगा और मांगणियार जैसे लोक कलाकार समुदायों द्वारा बजाया जाता था । मुरला को कई विद्वान पूंगी का विकसित रूप मानते हैं, क्योंकि इसकी संरचना और वादन शैली में पूंगी से समानता मिलती है । मुरला का मुख्य भाग प्रायः सूखी लौकी से बनाया जाता है । इस लौकी के निचले भाग में दो पतली नलियॉ लगाई जाती है । इन नलियों में रीड़ लगी होती है । एक नली धुन बजाने के लिए तथा दूसरी आधार स्वर देने के लिए प्रयुक्त होती है ।

इसका वादन करने के लिए वादक लौकी के ऊपरी भाग से हवा फूॅकता है । ये हवा रीड़ से होकर गुजरती है, जिससे ध्वनि उत्पन्न होती है । इन नलियों में लगे छिद्रों को उंगलियों द्वारा नियंत्रित कर विभिन्न धुनें बजाई जाती है । अनुभवली कलाकार लगातार स्वर बनाए रखने के लिए ''सर्कुलर ब्रीदिंग'' तकनीक का उपयोग करते है ।

इसकी ध्वनि मधुर, तीखी और स्पष्ट होती है जो पुंगी की तुलना में अधिक नियंत्रित और संगीतात्मक स्वर उत्पन्न करती है । यह वाद्य लोकगायन को संगीत के लिए उपयुक्त वाद्य है जिसका प्रयोग लोक गीतों की संगीत में, ग्रामीण उत्सवों में, पारंपरिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में तथा लंगा समुदाय की संगीत परम्परा किया जाता था । इस वाद्य के लुप्त होने के कारण संस्थागत प्रशिक्षण और संरक्षण की कमी, वाद्य निर्माण करने वाले कारीगरों का अभाव, युवा पीढ़ी का आधुनिक वाद्यों की ओर आकर्षण, आधुनिक वाद्यों तथा इलेक्टॉनिक वाद्यों की ओर बढ़ता प्रभाव तथा पारंपरिक कलाकारों की संख्या की कमी के आदि है ।

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

7. **सुरनई** :–

राजस्थान का एक महत्वपूर्ण पारंपरिक सुषिर लोकवाद्य है । यह देखने और बजाने की शैली में शहनाई से मिलता जुलता है । इसलिए इसे कई बार शहनाई का लोक रूप भी कहा जाता है । राजस्थान के लंगा, मिरासी, ढोली तथा अन्य लोक कलाकार समुदायों में इसका विशेष महत्व रहा है ।

यह वाद्य एक रीड़ युक्त वाद्य है जिसमें फूंक मारने पर रीड़ कंपन करती है और ध्वनि उत्पन्न होती है । इसकी आवाज़ तेज मधुर और दूर तक सुनाई देने वाली होती है । यह नली, रीड तथा घटीकार मुख इन तीन भागों से मिलकर बनी होती है । वादक रीड़ में फूॅक मारता है तथा उॅगलियों द्वारा स्वर उत्पन्न करता है । इस वाद्य की ध्वनि अत्यंत गूॅजायमान तथा तीव्र होती है जिससे उत्साहपूर्ण एवं मंगलमय वातावरण का निर्माण होता है । इस वाद्य का प्रयोग विवाह समारोहो में, धार्मिक उत्सवों में लोकदेवताओं के मेलों में, राजस्थानी लोकनृत्यों के संगीत में, तथा ग्रामीण सांस्कृतिक आयोज़नों में किया जाता है ।

आधुनिक संगीत का बढ़ता प्रभाव, नई पीढ़ी की कम रूचि, प्रशिक्षण की कमी, लोक कलाकारों की आर्थिक समस्याऍ, सांस्कृतिक आयोजनों की कमी के कारण यह वाद्य आज लुप्तप्राय वाद्यों की श्रेणी में माना जाने लगा है ।

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

8. **बांकिया** :–

बांकिया राजस्थान का एक पारंपरिक लोक सुषिर वाद्य यंत्र है, जो अपने मुडे हुए आकार और तेज, गुंजदार ध्वनि के लिए जाना जाता है । यह एक पीतल या कांसे से बना वक्र (मुडा हुआ) फूॅक वाद्य है । इसका आकार ''ङ'' या घुंमावदार सींग जैसा होता है। इसे फूॅक मारकर बजाया जाता है और इसकी ध्वनि बहुत तेज व दूर तक सुनाई देने वाली होती है । वादक इस वाद्य में जोर से फूंक मारता है, होठो के कंपन से इसमें ध्वनि उत्पन्न होती है । यह वाद्य केवल स्वर नियंत्रण से बजता है, उंगलियों से इस वाद्य को नही बजाया जाता है ।

यह वाद्य विवाह समारोहो, धार्मिक जुलूसों, लोक नृत्य (घूमर, गैर, आदि) तथा मांगलिक और उत्सव अवसरों पर ढोल–नगाडो के साथ बजाया जाने वाला वाद्य है । आधुनिक बैंड और डी.जे. के कारण यह वाद्य भी आज लुप्तप्राय होने के कगार पर है ।

निष्कर्ष :–

लुप्तप्राय हो रहे ये सुषिर वाद्य केवल संगीत के साधन नहीं, अपितु लोक जीवन, परम्परा और सांस्कृतिक पहचान के वादक रहे हैं । लेकिन आधुनिकता, बदलती मनोरंजन की आदतों और पांरपरिक कलाकारों की कमी के कारण इनकी उपस्थिति धीरे–धीरे घट रही है । जो वाद्य कभी गांव–गांव में, उत्सवों में, नृत्य–नाटको में तथा धार्मिक अवसरों पर प्रमुख भूमिका निभाते थे आज इनका प्रयोग सीमित क्षेत्रों और कुछ लोक कलाकारों तक सीमित रह गया है ।

UNDER PEER REVIEW IN IJAR

निष्कर्षतः यह स्पष्ट है कि यदि इन परम्परागत वाद्य यंत्रों को संरक्षित नहीं किया गया तो आने वाली पीढ़ियॉ इनके वास्तविक स्वर और सांस्कृतिक महत्व से वंचित रह जाऍगी । इनके संरक्षण के लिए लोक कलाकारों को प्रोत्साहन, शिक्षा में लोक संगीत का समावेश और सांस्कृतिक आयोजनों में इनके उपयोग को बढ़ावा देना आवश्यक है ।

संदर्भ गंथ सूची :–

1. बोराणा, रमेश, राजस्थान के लोक वाद्य, राजस्थान संगीत नाटक अकादमी, जोधपुर, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, प्रथम, 2008
2. मिश्र, डॉ लालमणि, भारतीय संगीत वाद्य, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
3. डॉ. अनिता, राजस्थान के लोकगीत और उनमें प्रयुक्त लोकवाद्य, शलभ पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, प्रथम, 2012
4. शर्मा, डॉ सुनीता, भारतीय संगीत का इतिहास (आध्यात्मिक एवं दार्शनिक), संजय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम, 1996
5. चक्रवर्ती, डॉ कविता, राजस्थान के लोकवाद्य, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, प्रथम, 2024
6. कल्ला, डॉ. वन्दना, राजस्थान के लोकतत् वाद्य, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, प्रथम, 2014

UNDER PEER REVIEW IN IJAR